दो शब्द

विश्वका भविष्य, आज अशान्तिके काले बादलोंके घिर आनेसे, अन्धकारमय हो गया है। विद्वानोंका मत है कि इस अशान्तिका कारण आधुनिक सभ्यता और उत्पादनकी आधुनिक व्यवस्था है। भारतीय छात्र बगैर वर्तमान अवस्था और उसके परिणामपर विचार किये ही उसी संस्कृतिको अपनानेको लालायित हैं। अपनी भारतीय संस्कृतिमें ऐसी व्यवस्था है कि यह नया रोग देशवासियोंको न लगने पाये। भारतका भविष्य भारतके भावी विधाताओंपर निर्भर है। छात्र जीवनमें यदि नवयुवकोंने देशका कल्याण करनेका व्रत ले लिया तो फिर सब मुश्किल आसान हो जायेगी। यही आशा लेकर यह पुस्तक देशके नौनिहालोंको समर्पित है।

विनीत —

रुलियाराम गुप्त

देशके नौनिहालोंसे

१

देशकी वर्तमान अवस्था

—:०:—

विषय-सूची

भूमिका

हमारी सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक अवनति किसीसे छिपी नहीं है। फिर भी भारतीय इसे दूर करनेकी चेष्टा क्यों नहीं करते उसका एक कारण यह भी है कि हम अपनी कमजोरियोंपर ध्यान नहीं देते। हम बड़ी आसानीसे यह शिकायत कर सकते हैं कि हमारी सामाजिक कुरीतियां हमारा सत्यानाश कर रही हैं, हमें पशु बना रही हैं लेकिन उन्हें दूर करनेका उपाय कौन करता है? इसी प्रकार हमारी आर्थिक अवस्था भी है। अन्य देशोंको देखिये किस प्रकार उन्नति कर गये हैं और हम अपनी जरा-जरासी जरूरतोंके लिये उनपर निर्भर हैं। हमारा अस्तित्व आज उन देशोंपर निर्भर है जिनसे हम अपनी जरूरतकी चीजें लेते हैं। राजनीतिक दु॰ का कारण भी हमारी अपनी कमजोरियां हैं

जब सारा राष्ट्र एक स्वरसे कोई माग करे तो किसमें इतनी शक्ति है जो उसमे बाधा डाले। लेकिन गुलाम मनोवृत्तिने हमे आपसमे लड़ने और तूतू-मैंमैं करनेकी शक्ति और ज्ञान दे दिया है और विकासके विचार पास फटकने भी नही पाते। फिर हमारी उन्नति तभी हो सकती है जब हमारी मनोवृत्तिमें, विचारधारामें, खान-पान तथा रहन-सहनमें क्रान्तिकारी परिवर्तन हो। ऐसा तभी हो सकता है जब अपनी बुद्धिको विकसित करनेका प्रयत्न करें।

समाज

तरुण समाज हमारी सामाजिक अवनतिका कारण हमारी कुरीतियोंको बतलाता है, और पुराने लोग तरुण समाजमें फैली नयी रोशनीकी बुराइयोंकी ओर संकेत करते हैं। इस प्रकार आपसमें लड़ते हैं लेकिन किसीमें इतना साहस नहीं है कि वह बुराईको दूर करने

की कोशिश करे। यदि तरुण समाजको पुराने रस्म-रिवाजमें बुराइयां दिखलायी पड़ती हैं तो वह उन्हें बदले, लेकिन तब उसको भलाइयां बतलाये और उन्हें कार्यरूपसे दिखलाकर जनतापर यह भली भांति विदित कर दे कि इन्हीं सुधारोंसे ही देशका सामाजिक उद्धार हो सकता है। पुराने लोगोंको हठ छोड़कर सामाजिक रीतियोंमें आवश्यक सुधार करना चाहिये और बजाय यह उपदेश करनेके कि पुरानी रीतिया मानी जायें उन्हें तरुण समाजको उनकी बुराइयों और भलाइयोंको दिखाना चाहिये। हमारी सामाजिक प्रथाओंका श्रोत वेद तथा अन्य शास्त्र हैं जो सस्कृतमें हैं और तरुण समाज उनसे अपरिचित है। स्वय पुराने लोग भी कभी सामाजिक प्रथाओंको समझने की कोशिश नहीं करते—उनकी विशेषता, अर्थ, भलाई और बुराईको वे स्वयं नहीं पहचानते। यही युवक और वृद्ध जनोंके पारस्परिक द्वेषका कारण है।

संस्कार—हमारे संस्कारोंमें तरुण समाज इसी लिये बुराई देखता है कि उनका उद्देश्य और अर्थ अस्पष्ट है। जमाना बहुत बदल गया है। शिक्षाके माध्यम और रीतिने विचारधारातक बदल डाली है और वर्तमान युगकी यह विशेषता है कि मनुष्य प्रत्येक कार्यके कारण और उद्देश्यकी खोज करता है। यही कारण है यज्ञोपवीत, विवाह आदि सस्कारमें भ्रम फैल गया है। अधकचरा ज्ञान भीषण रूपसे हमारी हानि कर रहा है। हममें न नये सुधार हैं और न पुराने सस्कार। फिर हमारी सामाजिक दशा क्यों न बिगड़े। बाल विवाह, अनमेल विवाह, बहु विवाह आदि बराबर देशमें हो रहे हैं जिनके औचित्यके लिये लोग शास्त्रोंका आश्रय लेते हैं और विरोधी उन शास्त्रोंको घृणित समझने लगते हैं। फलतः पुराने सस्कारों और प्राचीन शास्त्रों-की भलाइयोंसे भी हम वंचित हो जाते हैं। जब उपर्युक्त

प्रकारके विवाहोंसे प्रत्यक्ष हानि हो रही है तो हम उसका वहिष्कार क्यों न करें। हम स्वय वुराई नहीं देखते और जब सुधारप्रिय लोग व्यवस्था करते हैं तो हम उसका विरोध करते हैं जिससे समाजको वड़ी हानि पहुच रही है। तरुण समाजको विद्रोही न वनाकर हमें उसे गंभीरता और शान्तिपूर्वक शास्त्रोंके गुणों और अवगुणोंको स्पष्टरूपसे बताना चाहिये, वरना जैसा रुख जमानेका है वह स्थायी वना रहा तो हिन्दू सस्कृति, जो कि युगोंसे अटल है, चूर-चूर हो जायेगी और हम उस पाशविक सभ्यताको अपना लेंगे जो आज ससारके एक भागमें भीषण हाहाकार, रक्तपात और अशान्ति फैलाये हुए है। विधवा विवाहकी आवश्यकता जव महसूस की गयी तव विचार करना चाहिये और यदि सभी स्वीकार करें तो उसे लागू करना चाहिये। दूसरी वात यह है कि स्त्रियोंको स्वतन्त्रता अन्तमें मिलकर रहेगी और जैसे

जैसे शिक्षाका विकास होता जायगा स्त्रियां अपनी उन्नति के साधनोंका उपयोग अवश्य ही करेंगी । शिक्षिता विधवायें क्या समाजके नियमोंका पालन करेंगी ? शिक्षित तरुण क्या उनका साथ नहीं देगा ? इसीलिये यह आवश्यक है कि हम तरुण समाज और स्त्रियों की मांगोंपर ध्यान दें और शीघ्र कार्रवाई करें । इस सम्बन्धमें यह बतला देना भी जरूरी है कि हम स्त्रियोंको पर्देके भीतर रख तथा अज्ञान पशु बनाकर अपनी उन्नति कदापि नहीं कर सकते । समय ऐसा नहीं रहा कि अब पर्दा और अशिक्षाके साथ सामाजिक उन्नति हो सके । जब स्त्रिया भी हमारी भाति शिक्षिता हो जायेंगी तब हम सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक कठिनाइयोंको दूर करनेमें सफल हो सकेंगे ।

शिक्षा और साक्षरता—अभागे भारतपर एक विपत्ति नहीं है । शिक्षा और साक्षरताकी दृष्टिसे यह

देश बहुत पिछड़ा हुआ है। कृषि, वाणिज्य आदिमें हमारी अधोगति इसीलिये है कि देशमें साक्षरजनोंकी संख्या गिनकर बतलायी जा सकती है। उच्च शिक्षाके साथ-साथ यह भी आवश्यक है कि ये शिक्षित जन—स्त्री और पुरुष साक्षरताका प्रचार करें। घरके नौकरको पढाने में अपना ही लाभ है और कोई लज्जाकी बात नहीं है। इसी प्रकार छुट्टियोंमें गांवोंमें जाकर ग्रामीणोंको पढाया जा सकता है जिससे देश धन-धान्यसे पूर्ण बन सकता है। गन्दगी, रोग आदिका कारण भी अशिक्षा है। स्त्रियों तथा गरीबोंकी अशिक्षासे ही हमारा इतना ह्रास हो रहा है। शिक्षाकी वर्तमान पद्धति और उद्देश्य अत्यन्त हानिकर है, अतः उसमें सर्वाङ्ग परिवर्तनकी आवश्यकता है। केवल पेट पालना शिक्षाका उद्देश्य नहीं; भले ही थोड़ी देरके लिये उसे साधन बना लिया जाये। हमारे देशमें ऐसी शिक्षाका सर्वथा अभाव है जिससे

वाणिज्य-व्यवसाय बढ़ सके। शिक्षितजनोंमें ऐसे अधिक मिलेंगे जिन्हें अंग्रेजीका तो ज्ञान है लेकिन देशी भाषा उनके लिये विदेशी हो गयी है। इसका परिणाम यह होता है कि वे देश और समाजकी आवश्यकता समझते नहीं और भारतीय संस्कृति, जल-वायु एवं अन्य विशेषतासे अपरिचित रहकर अपना और देशका सत्यानाश करते रहते हैं।

खान-पान—यह भारतका दुर्भाग्य है कि जहांके निवासियोंके लिये प्राचीन समयमें मामूली-से-मामूली कार्यके लिये भी सुव्यवस्था थी वहां आजकल भक्ष्याभक्ष्य का प्रकोप तूफानी चालसे जारी है। पाश्चात्य सभ्यताने देशवासियोंमें अधकचरा ज्ञान भर दिया है, जिससे न तो भारतीय नियमका पालन हो रहा है और न पश्चिम का ही। चाय, काफी, कहवा, तम्बाकू, मांस, अण्डे आदि का प्रयोग अधिकाधिक बढ़ रहा है जिसका परिणाम नाना

प्रकारके रोग और अकाल मृत्यु फैल रही है। इस युग-मे दीर्घायु तो किस्सा-कहानी हो गयी। वक्त-बे-वक्त, ज्यादा-कम, भक्ष्याभक्ष्य, देशी-विलायती खान-पान तरुण समाजको नाशकी ओर तेजीसे लिये जा रहा है। मांसाहारकी बुराइयां पश्चिमीय विशेषज्ञोंने भले ही देख ली हों लेकिन भारतीयोंके कर्मसे ऐसा मालूम होता है कि बगैर भट्टीमें हाथ दिये वे न मानेंगे। इसका परिणाम विचार-धारा तथा रहन-सहनपर भी पड़ रहा है। दूध-घी एक तो यों ही कम होता जा रहा है उसपर दूधका बहिष्कार और घीके स्थानपर मिलावट या बनस्पति तेल। जिस उम्रमें मनुष्य हाथसे पत्थरका चट्टान तोड़ सकता है उसमें एक भारतीय युवक फूक देनेसे उड़ जाता है और छोटे-छोटे बच्चे संक्रामक रोगोंके शिकार नजर आते हैं। पश्चिमीय आहार-विज्ञान सर्वथा त्याज्य नहीं है लेकिन यह देखना आवश्यक है कि वह हमारे जल-

वायुके अनुकूल है या प्रतिकूल। इसमें काफी दोष हमारे देशके डाक्टरों, वैद्यों तथा अन्य वैज्ञानिकों का है जो खाद्य पदार्थका विश्लेषण करनेकी आवश्यकता महसूस नहीं करते और देशको रसातलकी ओर लिये जा रहे हैं।

एक तो विशुद्ध खाद्य पदार्थका अभाव और उसपर आहार सम्बन्धी ज्ञानकी कमी जिससे हम सभी प्रकारसे हीन होते जा रहे हैं। गेहू और पालकके सागमें, यदि युवकोंके सामने कह दिया जाये, विटामिन है तो वे हंसी उड़ायेंगे लेकिन टिनमें बन्द गोश्त किस प्रकार उनमें राजयक्ष्माके कीटाणु लाता यह नहीं समझ पायेंगे। इसी प्रकार पुराने चालके लोगोंमें अज्ञानता है। धर्मके नामपर हानिकर चीजोंका खाना तथा मिठाई, पूरी आदि स्वास्थ्यको चौपट किये दे रही हैं लेकिन उनकी आंखें नहीं खुलतीं। बच्चोंको प्रातःकाल जलेबी, हलुआ, या अन्य प्रकार मिठाइयां और बिस्कुट खिलाना अज्ञानता है।

अभी समय है। आहार-शास्त्रका पूर्ण ज्ञान स्त्रियों तथा पुरुषोंको कराना आवश्यक है।

रहन-सहन—बड़े-बड़े शहरों, विद्यालयों, ट्रेनों, स्टेशनों तथा मेले-तमाशोंमें जाकर देखा जाये। कितने प्रकारके जूते, टोपिया, केश विन्यास, चश्मे, कोट, कमीज कुरते, छड़ियां नजर आयेंगी। पहनाव-सिंगार तथा चाल ढालसे यह कहना मुश्किल है कि भारतमें कौन भारतीय है। क्या स्त्री क्या पुरुष सभी सतरङ्गी पक्षियां बने घूमते हैं। भारतमें असख्य जातिया, अनेक भाषाएं, नाना प्रकारके वस्त्राभूषण न मालूम कबसे थे। लेकिन आजकल जिस प्रकार भारतीय स्त्री और पुरुषकी रहन-सहन हो गयी है वह तो अभूतपूर्व है। जिन नव-जवानोंका शृङ्गार विद्या, तेज और ब्रह्मचर्य था आज वह वेश्याओंकी भांति बाल बनाये, क्रीम-पाउडर लगाये ऐसी चाल-ढाल रखते हैं कि रही सही आशा भी चली

जाती है कि ये लोग देशका उद्धार करेंगे। यह रहन-सहन न सत्य है न कल्याणकारी और न सुन्दर ही है। उसपर सिगरेट और पानने तमाम वायुमण्डल और कार्य दूषित कर रखा है। जहां-तहा पान खाकर थूकना सिगरेटके धुएं उड़ाना कितना भयानक है। छात्रोंको न तो अपनी भाषाका पूरा ज्ञान है और न अंग्रेजीका। फलतः उनसे बात करनेमें घृणा-सी होती है। बात व्यवहार न पश्चिमीय है और न भारतीय जिससे शिष्टता और शील नजर ही नही आता। देश किधर जा रहा है !

सोने-जागने, स्नान, व्यायाम, धर्म-कर्म, खाने-पीने तथा अन्य दैनिक कर्मोंका न कोई नियम रहा और न पाबन्दी। माता-पिता भी इस रोगसे मुक्त नहीं हैं। उनमें स्वयं रहन-सहनका ज्ञान नहीं है और सन्तान इसी प्रकारके दूषित वायुमण्डलमें पलते हैं। विद्यालयोंमे अनेक प्रकारकी बुराइया और उन्हें दूर करनेकी जिम्मे-

दारी कोई अपनी नहीं मानता। स्त्रियोंकी भी इसी प्रकारकी दुर्दशा है। नव शिक्षिता वधुओंमें न तो व्यवहारिक ज्ञान रहता है और न बौद्धिक। वे न गृहकार्यमें दक्ष हैं न बाहरके। फिर पारिवारिक जीवन सुधारे कौन? सन्तानको उत्तम बनाये कौन? आवश्यकता है कि भारतीय सस्कृति और सभ्यताको परिष्कृत कर उसे अपनाया जाये। मातृभाषाका ज्ञान होना सबसे बड़ी आवश्यकता है। धर्म शास्त्रोंको अनिवार्य रूपमें पढ़ाया जाये ताकि उनकी भलाई बुराई सभीको मालूम हो जाये और सुधार किया जाये। यदि ऐसा न हुआ तो हमारी भी आगे चल कर वही दशा होगी जो कि छोटे-मोटे पश्चिमीय अथवा अशिक्षित पूर्वीय देशोंका हो रहा है। भारत और भारतीयता ही ससारसे लोप हो जायेगी। रहन-सहनमें आमूल परिवर्तन की आवश्यकता है। देशी ढङ्ग कितना मोहक और उपयोगी यह विदेशियोंसे पूछा जाये।

अर्थ

पैदावार—विदेशियोंने भारतको पैदावारकी दृष्टिसे सोनेकी चिड़िया बताया है। लेकिन वह ऐसी सोनेकी चिड़िया है जिसके अन्दर जवाहिरात भरे पड़े हैं और जिसके पास वह हो उसे किसी बातकी कमी नहीं होनी चाहिये। भारतमे क्या नही है, महत्वपूर्ण प्रश्न यह है। असख्य मन माल विदेशोंको जाता है और देशमें करोड़ोंको पेट भर अन्न नही मिलता और विशुद्ध खाद्य पदार्थ तो दूरकी बात है। अन्न, खाद्य पदार्थ तथा सभी प्रकारकी वस्तुए इतने परिमाणमें भारतमें उत्पन्न होती हैं कि उसे किसी दूसरे देशपर निर्भर रहना ही नहीं पड़े। लेकिन आज उसकी दुर्दशा इसीलिये है कि वहां सुगमतासे सभी चीजें पैदा की जा सकती है। आज यहांके लोग बेकार हैं जहां यदि सुचारु रूपसे पैदावारके अनुसार कार्य किया जाये तो सैकड़ों

वर्ष बेकारीका नामोनिशान न रहे। धान, गेहूं, दाल आदि नाना-प्रकारके अन्न, तेलहन, रुई, जूट, गन्ना, नारि- नारियल, चाय, तम्बाकू, रबर, नील, नाना प्रकारके फल और शाक आदि भारतमें आसानी और कसरतसे पाये जाते हैं। ऐसे देशके लोग भी नंगे और भूखे रहें? भारतीय किसान अपने खेतोंकी परवाह नहीं करते। जानवर जिस प्रकारके उपयोगी पाये जाते हैं वे भी कृषिमें सहायक हैं। गाय, भैंस, बकरी आदिकी अधिकतासे घी-दूधकी कमी तो होनी ही नहीं चाहिये साथ ही बैल और भैंसे अन्य प्रकारसे उपयोगमें लाये जाते हैं। हल जोतने, गाड़ी खींचने, सवारी आदिके लिये बैल, भैंसा, घोड़े, ऊंट, गधे आदिकी भारतमें कोई कमी नहीं है। किसान सरलतासे इनका उपयोग कर लेता है और देशवासियोंको स्वयं आधा पेट भोजन तथा नंगे रहकर भोजन देता है। फिर भी हम बेकार रहें और धन व्यय करनेपर भी विशुद्ध खाद्य पदार्थ

न मिले। नये ढङ्गसे व्यापक परिमाण पर खेती की जाये तो कितनी आसानीसे यह समस्या हल हो सकती है।

खनिज पदार्थ—खनिज पदार्थ भी भारतमें ऐसा कम नहीं है जिससे वर्तमान युगको लक्ष्यकर भारतीयोंको निराश होना पड़े। लोहा, कोयला यदि अधिक नहीं तो भारतके लिये पर्याप्त है। इसके अलावा अन्य धातु, पेट्रोल, तेल, अभ्रक, सोना, चांदी यहां पाया जाता है। तांबा, पीतल, शीशा आदिकी तो भारतमें कमी नहीं है। जिस प्रकार धातुकी बनी चीजोंका उपयोग भारतमें घर-घर होता है उससे तो भारतमें समृद्धिशाली कारखाने तैयार हो सकते हैं। फिर भी पुराने तरीकेसे लोहार, कसेरा तथा सोनार किस प्रकार जरूरतकी चीजें अच्छीसे अच्छी और कलात्मक ढगसे बना लेते हैं।

आयात-निर्यात—हमारी गुलामी, गरीबी और पतनमें हमारे आयात तथा निर्यातका हाथ विशेष रूपसे

रहा है। आधुनिक सभ्यताने यह ऐसा हथकण्डा दिया है जिससे बड़े-बड़े देश गुलाम बना लिये जाते हैं और हथकडेकी प्राप्तिके लिये आज ससारमें अशान्ति फैली है। अपना वैभव हम आयात और निर्यात द्वारा लुटा रहे हैं। कच्चा पदार्थ देकर हम बने मालके लिये विदेशोंका मुंह ताकते हैं। यह वही दशा है जो एक भूखा व्यक्ति अपने कच्चे चने किसी भूखे भड़भूजेको दे देता है। यही कारण है कि अन्य देश हमें अशिक्षित और असभ्य समझते हैं। उनका यही ख्याल रहता है कि हम भी अफ्रीका और आस्ट्रेलियाके आदि निवासियोंकी भांति हैं जो कांचकी चूड़ियों और गुरियोंके बदले सोना, चांदी तथा अन्य महत्वपूर्ण वस्तु दे देते हैं। मामूली-सी सुई और निबके लिये हम विदेशसे जहाज आये इसकी प्रतीक्षामें रहते हैं। यह दशा क्या हमें कभी उठने देगी। तारीफ तो यह कि खादीतक विलायतसे बनकर आये, रोटी, मिठाई, बिस्कुट

दवाइयां आदि तो खैर आती ही हैं। क्या हमारी आंखें अब भी न खुलेंगी !

धनका उपयोग—उपर्युक्त तीन बातोंसे यह निष्कर्ष निकलता है कि धनका उपयोग भारतवासी नहीं करते। सोने और चांदीको गाड़कर रखनेकी प्रथा देशकी उन्नतिमे बाधक है। यदि धनका उपयोग कर भारतको कल कारखानोंसे भर दें तो देश कितना समृद्धिशाली हो जाय, बेकारी दूर हो जाय और किसी प्रकारके राजनीतिक सकटसे भय न हो। जिन मामूली चीजोंके लिये आज हम विदेशियोंका मुंह ताकते हैं वे सरलतासे हमें मिल भी जायें और देशका धन देशमें ही रह जाये। बड़े-बड़े धनी मोटर चढ़ना चाहते हैं लेकिन बनाना नहीं चाहते ; रेल, तार, डाक आदिकी सुविधा चाहते हैं मगर वह कौन करता है कैसे होती है इसका ध्यान नहीं रहता। देशमें जिस दिन यह बुद्धि आयेगी उसी दिन हमारा

उद्धार होगा। फाटके और सट्टेबाजीमेंसे अस्थायी धनका सग्रह करना कहां की बुद्धिमानी है जब दूसरे कार्यों द्वारा हम अपना और देशका कल्याण कर सकते हैं। विदेशी कपड़े यदि अच्छे होते हैं तो धनी लोग वैसा ही देशमे क्यों नहीं उत्पन्न करते। यहींसे रुई, तम्बाकू आदि बाहर जायेगी और जब धोती, सिगरेट आदि बनकर आयेगी तो हमारे लिये पूज्य हो जायेगी। किन्तु यही चीज देशमे तैयार करनेकी चिन्ता किसीको नहीं है।

देशके अधिकारियोंको इस ओर ध्यान देना चाहिये और युवकोंको ऊचीसे ऊची वाणिज्य-व्यवसायकी शिक्षा दी जाये ओर धनका उपयोग कर देशको सभी प्रकारसे स्वावलम्बित बनाना चाहिये। इतने बड़े देशमें किसी मालके खपनेमें देरी नहीं लगेगी। इसलिये यह डरनेकी जरूरत नहीं है कि माल कहां बेचा जायेगा।

राजनीति

गुलामी—भारतकी गुलामीका इतिहास दुःखद और विचित्र है। पहले अंग्रेज व्यापार करने आये थे और बादमें हमारी फूटके कारण वे शासक बन बैठे। हममें और उनमें सभी दृष्टिकोणोंसे उतना ही अन्तर है जितना पूरब और पश्चिममें। फलतः हम गुलामीकी जजीरोंमें जकड़ते चले गये। थोड़ी देरके लिये हम यह भी मानलेते हैं कि यदि अंग्रेज न होते तो कोई दूसरे हम पर अधिकार कर लेते लेकिन हम तो गुलाम हैं ही और उनसे उत्पन्न दुःखोंसे पीड़ित रहते हैं। स्वाधीनतासे मनुष्य उन्नतिशील होता है और पराधीनता उसे कमजोर और गैरजिम्मेदार बना देती है। जिन देशोंने आजतक उन्नति की है और इस समय सिर ऊंचा किये गर्वमें इतरा रहे हैं उन्होंने पहले स्वाधी-

नता प्राप्त की थी। पराधीन देशोंने कब उन्नति की ? इसलिये यह जरूरी है कि सर्वतोमुखी उन्नतिके पहले हमें स्वाधीन होना है। किसी स्वतन्त्र देशकी पराधीनता भी अधिक दुःखदायी है। स्वेच्छासे बुरा काम भी थोड़ी देरके लिये इतना अप्रिय नहीं होता जितना परवश होकर सद्कार्य। यही कारण है कि राजनीतिक मतभेद बराबर बना हुआ है और देशका भविष्य सर्वथा अन्धकारमें है। संसारमे आज जिस प्रकार अशान्ति है उससे यह तो स्पष्ट है कि किसी देशकी गुलामी और आजादीका भविष्य अन्धकारमें है।

साम्प्रदायिकता—देशकी गुलामीका प्रधान कारण यह भी है कि देशमें साम्प्रदायिकताका विष बुरी तरहसे फैला हुआ है। इसका पक्का सबूत तो यही है कि अंग्रेजी सरकार बराबर इसी बातपर जोर देती रही है कि पहले अपने देशमे एकता लाओ तब स्वराज्य मांगो। जब

हम एक स्वरसे स्वराज्यकी माग नही कर सकते तो फिर हमारी पुकार सुनेगा कौन और हमारी मांगपर ध्यान कौन देगा ? उस समय कैसी परिस्थिति उत्पन्न होती यदि ब्रिटिश सरकारकी एकताकी मांगपर तुरन्त ही हम भारतवासी एक होकर एक स्वरमे पूर्णस्वाधीनताकी माग करते। लेकिन शोक ! हम आपसमें तो लड़ते ही हैं साथ ही तीसरे आदमीके पास भी जाकर एक दूसरेका गला काटनेको तैयार हैं। इस फूटका कारण कुछ भी हो यह इतनी बड़ी बुराई है कि स्वराज्य मिल जानेपर भी इसका परिणाम भीषण हो सकता है। यदि हिन्दू-मुसलिम एकताका प्रयत्न आर्थिक आधारपर किया जाये तो उसकी प्रगतिकी आशा अधिक है। केवल खास-खास अवसरोंपर दिखावटी एकता टिकाऊ नहीं होती। स्वाधीनताके लिये एकता नितांत आवश्यक है।

उद्देश्य हीनता—भारतीयोंका जीवन सामूहिक रूपसे अध्ययन करनेपर उद्देश्यहीन दिखलायी पड़ता है।

जो जैसा है और जैसी अवस्थामें है उसीमें रहना पसन्द है। उद्देश्यहीन जीवन पशु-वृत्तिका द्योतक है। यही दशा हमारे राजनीतिक जीवनमें भी है। राजनीतिक क्षेत्रमें ऐसे अनेक सुधारक, राजनीतिक आदि मिलते हैं जिनका उद्देश्य कुछ नहीं। केवल राजनीतिक कहलानेकी आकांक्षामात्र होती है। देशके लिये इनका अस्तित्व बड़ा घातक है। ये रोड़े अटकाते रहते हैं। कहीं-कहीं तो इनका अस्तित्व साम्प्रदायिकतासे भी भयानक रहा है। कभी ये इस दलमें और कभी उस दलमें जाते हैं और जनताको गलत राह दिखलाते हैं। उद्देश्यहीन जीवन अपना तो सर्वनाश करा ही लेता है समाजके लिये अधिक घातक होता है। जब कभी कोई प्रसङ्ग उठा जिसमें उनका कोई स्वार्थ हुआ या न हुआ तो उसी प्रकार उसका विरोध और समर्थन करते हैं। वे फलतः बाधक होते हैं। हमारा राजनीतिक जीवन इन लोगोंके

कारण दूषित है और इनका प्रतिनिधित्व अन्य देशोंमें हमें वदनाम करता है।

वर्तमान अवस्था--देशकी वर्तमान अवस्था अत्यन्त शोचनीय है। यूरोपीय युद्धने यूरोपसे भी अधिक उसे दु:खद वना दिया है। प्रत्येक क्षेत्रमें इस युद्धका प्रभाव पड़ रहा है। स्वय सरकार भी कम चिच-लित नहीं है, क्योंकि नाजीवादी जर्मनी अमानुषिक रूप-से ब्रिटेनपर आक्रमण कर रहा है, लेकिन ब्रिटेन बड़ी वहादुरीके साथ उसका मुकाविला कर रहा है और प्रत्या-क्रमण भी। फ्रांसने भी उसे धोखा दिया। ऐसी अवस्था-में भारतके सम्बन्धमें भी वह कुछ न कर सकने और युद्धको सुचारु रूपसे सञ्चालित करनेके लिये कार्रवाइया करनेको विवश है, लेकिन भारतमें यह अवस्था कदापि न उत्पन्न होती यदि देशमें एकता होती और सरकार देशकी मांग पूरी कर देती। ऐसी अवस्थामें नाजीवादके

विरुद्ध भारत अवश्य ही ब्रिटेनकी सहायता करता। फिर भी राजनीतिक मतभेद होते हुए भी देश यथाशक्ति चेष्टा कर रहा है। यदि ऐसी अवस्थामें कोई राजनीतिक आन्दोलन आ खड़ा हुआ तो परिस्थिति और भी भीषण हो जायेगी। कांग्रेसका रुख यद्यपि अभी अस्पष्ट है तथापि महात्मा गान्धीकी वायसराय महोदयसे आखिरी मुलाकात निराशापूर्ण ही रही। कोई समझौता न हो सका। इस समय सरकार और कांग्रेस दोनोंको गम्भीरता पूर्वक विचार कर अगला कदम रखना होगा क्योंकि परिस्थितिका दोष दोनोंके सर पड़ेगा। अधिकांश प्रान्तोंमें किसी प्रकारकी लोकप्रिय सरकारें नहीं हैं और गवर्नर स्वयं सहायकोंके साथ शासन कर रहे हैं। यदि कोई सरकार होती तो कमसे कम परिस्थितिका दोष अंशतः प्रजापर पड़ता। भारत सरकार इस समय भारतके रक्षार्थ संलग्न है।

आदर्श दिनचर्या

निद्रा त्याग—रात्रिमें जल्दी सो जाना और प्रातःकाल जल्दी उठना ही स्वास्थ्यकी कुञ्जी है। ब्रह्ममुहूर्तमें उठकर ईश्वरका चिन्तन करे। इस समयको अमृत-बेला भी कहते हैं। लगभग ४॥ बजे मनुष्यमात्रको निद्रा त्याग कर देनी चाहिये। इस समय शरीर, इन्द्रियां बुद्धि आदि स्वच्छ और विमल रहती हैं। इस समयकी वायु स्वास्थ्यकी वृद्धि करती है और निद्रा त्याग करनेसे शरीर और मनमें स्फूर्ति तो दिन भर बनी ही रहती है साथ ही क्रमशः तेज और ओजकी वृद्धि होती है। इस समय उठनेसे स्वप्न दोष नहीं होता ऐसा भी विद्वानोंका मत है। निद्रा त्याग करते ही जल-स्पर्श करना चाहिये। आंख और मुंह धो डाला जाये और हो सके तो थोड़ा पानी पी लिया जाये। पानी पीनेका अभ्यास पेटकी शिकायत

रखनेवाले व्यक्तियोंको लाभकर है, और जिन्हें कब्जियत हो वे तो अवश्य ही इसका व्यवहार करें ।

शौच—निद्रा त्यागके बाद ही मल त्याग कर देना आवश्यक है । यदि तत्काल ही मल त्याग न किया गया तो उस समयकी शारीरिक एव मानसिक स्वच्छता नष्ट हो जाती है । देर तक सोते रहने और मल-त्याग न करनेसे एक प्रकारकी गैस (वायु) उठती है जो शरीरके ऊपरी भागोंकी ओर चलती है तथा शरीर और क्रमशः मस्तिष्कको हानि पहुचाती है । मल त्याग भी दो बार सुबह और शाम अवश्य ही करना चाहिये । मल-मूत्रकी शकाको किसी भी समय रोकना नही चाहिये ।

दांतोंकी सफाई—मल त्यागके बाद ही दात साफ कर लेना अच्छा है । दातोंकी सफाईके लिये नीम, बबूल आदिके दतुवन अच्छे होते हैं । देशी मञ्जन भी काममें लाया जा सकता है । इस अवसरपर साफ पानीसे

कुल्ला आदि करना तथा खासकर बलगम आदि निकालना चाहिये। दांतकी एक नसका सम्बन्ध मस्तिष्कसे होता है अतः बुद्धिपर उसकी सफाई और गन्दगीका असर पड़ता है। साथ ही यदि दांत और मुंह गन्दा रहा तो उसके विकार पेटमें जायेंगे जिसका परिणाम अत्यन्त भीषण होता है। दांतोंके साथ जीभकी सफाई रखनी आवश्यक है।

स्नान—स्नान साधारणतः शीतल जलसे ही करना चाहिये। जाड़ेके दिनोंमें यदा-कदा गर्म जलसे स्नान करना हानिकर नहीं है, लेकिन यह ध्यान रहे कि सरपर गर्म जल कदापि न पड़े। मोटे तौलिये या गमछेसे खूब रगड़-रगड़कर स्नान करनेसे शरीरका मल दूर होता है। घर्षण स्नान शरीरकी सफाई तथा रोमकूपोंसे मल-पसीना निकालनेकी सर्वोत्तम रीति है। घर्षणसे त्वचा सुन्दर और मुलायम होती है। स्नानसे अग्नि और बलकी वृद्धि, शरीरकी पुष्टि एवं दीर्घायु प्राप्त होती है। स्नान दो बार करना चाहिये।

सन्ध्योपासना—स्नानके वाद ही मनुष्यको सध्या पूजा एवं ईश्वरोपासनाकी अन्य विधियोंमे रत हो जाना चाहिये। यह कर्म एकान्त और शुद्ध स्थान, तथा खुली हवामें करना चाहिये। इससे मनकी शुद्धि प्राप्त होती है, अपवित्र विचार आने नहीं पाते और मुखकी कान्ति वढ़ती है। जो सन्ध्या की जाये उसके श्लोकादिका अर्थ जानना चाहिये। प्राणायाम करना अत्यन्त लाभकर है। दोनों समय सन्ध्योपासना करनी चाहिये।

व्यायाम—व्यायामसे स्फूर्ति, क्रिया-शक्ति, अग्नि-वृद्धि, चर्बीका क्षय होता है और शरीरके समस्त भाग वलिष्ठ एवं यथोचित रूपमें पुष्ट और सुन्दर होते हैं। स्वास्थको वनाये रखने, वुढापाको रोकने तथा स्वास्थवर्द्धक भोजनको पचानेके लिये व्यायाम अत्यावश्यक है। इससे पसीने द्वारा गन्दगी दूर होती है और श्वास द्वारा रक्त प्रवाह एव फेफड़ोमें रक्तकी विमलता प्राप्त होती है।

व्यायाम उतना ही करना चाहिये जितना शरीर सह सके। खुली हवामें टहलना सर्वोत्तम व्यायाम माना गया है। अन्य प्रकारके व्यायामादि भी लाभकर हैं। कसरत के समय लगोट वाधना भी आवश्यक है। व्यायामके वाद सहसा जलपान या स्नान न करना चाहिये। व्यायामके कम-से-कम आध घण्टेके वाद, जिसकी पाचनशक्ति ठीक है, वह दूध पी सकता है, अथवा फलका रस पीना चाहिये। ठोस खाना हानिकर है। नौ बजेके पहले भोजन नहीं करना चाहिये।

भोजन—प्रथम भोजन १२ बजेके पहले अवश्य कर लेना चाहिये। भोजन सर्वथा सात्विक होना स्वस्थ रहनेके लिये आवश्यक है, गरिष्ठ भोजनसे अपच होती है। आहार नियमानुसार हो और गरिष्ठ, मिर्च-मसालेदार, तली हुई, बासी, उष्ण आदि चीजें नहीं खानी चाहिये। इससे वीर्य-क्षीणता, शक्तिहीनता और रोग एक साथ

आक्रमण करते हैं और बहुधा अकाल मृत्युका कारण भी यही होता है। भोजन ईश्वरका ध्यान करके शान्ति-पूर्वक, स्वच्छ और पवित्र मनसे तथा खूब चबा-चबा कर करना चाहिये। प्रत्येक ग्रासको इतना चबा डालना चहिये कि वह थूकके माफिक हो जाये। थूक (राल) मे पाचन शक्ति होती है। भोजनके आध घण्टे पहले तथा भोजनके साथ थोड़ा जल पिया जा सकता है लेकिन भोजनके बाद जल पीना हानिकारक है। भोजन-का स्थान स्वास्थ्यकर, हवादार और शुद्ध होना चाहिये। ठूंस-ठूंसकर खाना अत्यन्त हानिकारक है। जलकी प्यासको कभी नहीं रोकना चाहिये। पीनेकी चीजोंको धीरे-धीरे पीना चाहिये, गटगट पीना आयुके लिये हानिकारक है। भोजनके बाद १०० कदम धीरे-धीरे टहलना चाहिये लेकिन भागना या मेहनत करना हानिकारक है। भोजनके एक घण्टे बाद पानी पीना चाहिये। साधारणतः दो बारमें

अधिक भोजन नहीं करना चाहिये। शामको ८ बजेके पूर्व ही भोजन कर लेना चाहिये। सुबह और शामके भोजनोंके बीचमें पीनेकी चीज लेनी चाहिये, गरिष्ठ चीज नहीं खानी चाहिये। भोजनके साथ या सोनेके १ घण्टा पहले दूध पीना चाहिये।

विश्राम—लघुशका कर हाथ-पैर मुंह आदि धोकर सोने जाना चाहिये। सोते समय मन स्वच्छ होना चाहिये ताकि गाढ़ी नींद आये। यदि मानसिक शान्ति न मिले तो ईश्वरका ध्यान अथवा कोई उच्च भावोंवाली पुस्तकका अध्ययन कर लेना चाहिये। सोनेका स्थान खुला हुआ और हवादार होना चाहिये। पहननेके कपड़े ढीले और बिस्तर साफ होना चाहिये। एक कमरेमें एक ही व्यक्तिका सोना अच्छा है।

देशके नौनिहालोंसे

छात्रोंका कर्तव्य

विषय सूची

छात्रोंका कर्त्तव्य

छात्र जीवनमें मानव जीवनकी बुनियाद पोख्ता होती है। इसी कालमें बच्चोंको ऐसी बातें सिखायी जाती हैं जो उस समय उनकी बुद्धि बढाती हैं और आगे चल कर उनके जीवनको सुखमय बनाती हैं। किशोरावस्थासे युवास्थाके बीचका जो समय मानवजीवनमें आता है मनुष्य उस समय एक सफेद कपड़ेकी भांति होता है जिसपर कोई भी रङ्ग चढाया जा सकता है। इसीलिये यह आवश्यक है कि बच्चोंका पालन पोषण इस बातको ध्यानमें रखकर किया जाये कि उनका छात्रजीवन किसी प्रकार बुरा न होने पाये, क्योंकि इस अवस्थामें जो विचार या विकार वे ग्रहण कर लेंगे वह आसानीसे उन्हें नहीं छोड़ेगा। फिर देशका भविष्य आगे चलकर उन्हीं पर निर्भर रहेगा। इसलिये यह आवश्यक है कि हर प्रकारसे

उनके चारित्रका ख्याल रखा जाये ताकि उनके जीवनकी बुनियाद पोख्ता हो और आगे चलकर उसपर ऐसी इमारत खड़ी हो कि वह स्वय तो उसका आनन्दसे भोग करेगा ही समस्त मानव जातिको भी उससे यथा सम्भव लाभ हो।

यह बात ध्यानमें रखनी जरूरी है कि मनुष्य जीवन केवल संसारमें आकर उसके दुःख और सुखको भोगकर अन्तमें कीट-पतङ्गोंकी तरह मर जानेके लिये नहीं है। इसीलिये प्राचीन भारत इस बातपर अधिक जोर देता रहा है कि मनुष्य जीवन किसी पूर्व जन्मके पुण्य-प्रतापसे मिलता है और यदि उसके कर्तव्य पूरे न किये गये तो फिर मनुष्य जीवनके बदले कोई पशु-योनिमें जन्म लेना पड़ेगा और हो सकता है कि उस जीवको कभी मोक्ष न मिले। भारतके प्राचीन ग्रन्थोंमे मोक्ष ही जीवनका अन्तिम ध्येय माना गया है।

जीवनका उद्देश्य

[२]

मनुष्य अन्य जीवोंकी अपेक्षा सर्वश्रेष्ठ है। उसके शरीरकी बनावट, उसकी कर्मेन्द्रियां तथा ज्ञानेन्द्रिया सभी अन्य जीवोंसे भिन्न हैं और मानव जीवनके सुविधार्थ इनकी सृष्टि है। यह विशेषता इस बातका अकाट्य प्रमाण है कि मनुष्य जीवनकी भी विशेषता है और उसके कर्तव्य और दायित्व भी निश्चय ही महान् होंगे। हिन्दुओंमें इसीलिये कर्मपर विशेष रूपसे जोर दिया गया है। मनुष्य जीवनका उद्देश्य केवल अच्छा खाना, अच्छा पहनना, दुनियांके मजे लेना और अन्तमें मर जाना नहीं है। उद्देश्यहीन जीवन पशुता है और फिर मनुष्य जीवनका कोई उपयोग उससे नहीं होता।

पशु भी जीव हैं, उन्हें भी सासारिक दुःख और सुख भोगना पडता है लेकिन न तो उन्हें ज्ञान है और न

विशेष सुविधा। ज्ञान द्वारा ही मनुष्य बराबर अपनी उन्नति करता रहा है और प्रकृतिको अपने लिये उपयोगी बनाता रहा है। इतिहास एवं वर्तमान आविष्कार इस बातके साक्षी हैं कि पहले बहुत-सी बातें मनुष्यको नहीं मालूम थीं जिनके बगैर आज हमारा काम चलता ही नहीं। निस्सन्देह, इस प्रकारके विकासने मनुष्यको किसी अज्ञात प्रकृतिसे दूरकर ऐसी चीजोंपर अवलम्बित कर दिया जो कि कृत्रिम हैं और जिनका आविष्कार उसने स्वय किया है। यह भी कहा जा सकता है कि इसकी सृष्टि उसने स्वय की है। इस दृष्टिसे उसने स्वयं अपने पैरपर कुल्हाड़ी मारी। ऐसे आविष्कारों, सुखके साधनों तथा नूतन ज्ञानसे मनुष्यकी उन्नति हुई या नहीं यह तो समय और उन चीजोंका उपयोग ही बतलाता है।

विद्याध्ययन

[३]

ज्ञानी जीव होनेके कारण मनुष्य आजीवन अध्ययनशील होता है। वह सदैव सीखता ही जाता है। कोई भी मनुष्य, जीवनमें वह चाहे जितना सफल हो जाये, कभी यह नहीं कह सकता कि आगे उसे और कुछ नहीं सीखना है। ज्ञान और अनुभवकी बातोंकी कोई सीमा नहीं है और मनुष्य जीवन सीमित है। किसी एक ही विषयका पूर्ण ज्ञान भी मनुष्यके लिये पूर्णरूपेण सम्भव नहीं। ज्ञानार्जन करनेके लिये किसी विशेष काल और देशकी आवश्यकता नहीं पड़ती। मस्तिष्क द्वारा ही वह ज्ञानार्जन करता रहता है। यह मस्तिष्क ही मनुष्यको सर्वश्रेष्ठ जीव बनाता है। मस्तिष्ककी क्रियाशीलता ही मनुष्य जीवनका प्रतीक है। यदि ज्ञानार्जन न किया गया और उसे बराबर बढ़ाया न गया तो फिर मस्तिष्कका कोई कार्य

नहीं रह जाता और मनुष्यकी यही मृत्यु है। ज्ञानी जीवके लिये आध्यात्मिक मृत्यु ही मृत्यु है। शारीरिक मृत्युको तो सभी जीव प्राप्त होते हैं, उसकी कोई विशेषता नहीं।

विद्यार्थी जीवन इस कार्यका प्रारम्भ है। विद्यार्थी पहले-पहल सीखता है कि वह अपनी अमूल्य वस्तु मस्तिष्क द्वारा किस प्रकार ज्ञान हासिल करे और वह किस प्रकार उसके जीवनके लिये उपयोगी है। छात्र जीवनको ही उपयोगी बनाकर मनुष्य अपना जीवन मनुष्यवत् व्यतीत कर सकता है। विद्याध्ययन मनुष्यका पहला कर्तव्य होता है और इसीके बनने और बिगड़नेपर समस्त जीवन अवलम्बित रहता है। यदि बुनियाद पक्की न हुई तो फिर उसपर इमारत न बन सकेगी और यदि किसी प्रकार बन भी गयी तो वह किसी दिन भी ढह सकती है, जिससे इस कमजोर व्यक्तिका जीवन तो सर्वनाश हुआ ही, साथ ही उसके पड़ोसियोंकी भी जानें जायेंगी। इसी-

लिये मनुष्यको अपना जीवन उत्तम बनाना होता है। व्यक्तियोंसे ही समाज बनता है, अतः एक व्यक्ति जब अपने लिये बुरा कार्य करता है तो उसे भलीभांति यह बात जान लेनी चाहिये कि वह समाजका भी अहित कर रहा है। व्यक्ति तो समाजका एक भाग है। जिस प्रकार इमारत छोटे-छोटे कणों और ईटोंसे बनती है इसी प्रकार समाज है। मामूलीसे मामूली व्यक्ति भी समाजका प्रत्येक क्षण हित और अनहित करता रहता है। जरा-सी गफलतकी और समाजको हानि पहुची। जरा-सा बुरा-कार्य हुआ और एक व्यक्तिके साथ सारा समाज उसके फलका भागी हुआ।

अतएव विद्यार्थी जीवन अमूल्य है। यह अवस्था फिर कभी नही आयेगी। इतना शुद्ध, क्रियाशील और तेज मस्तिष्क तथा हृदयकी विमलता फिर प्राप्त नहीं होती। छात्र जीवनकी कमाई सदैव काम आती है।

सर्व प्रथम बालकको मातृभाषाका ज्ञान कराया जाता है। मातृभाषा ही मनुष्यके जीवन निर्माणमें सहायक होती है। आजकल यह देखनेमें आता है कि छात्रगण मातृभाषाका बहिष्कार करते हैं और उसका न जानना या टूटी-फूटी बोलना एक श्रेय और प्रशसाकी बात मानते हैं। परिणाम यह होता है कि उनका ज्ञान अपरिपक्व रह जाता है और वे अपनी सस्कृति, अपने देशकी आवश्य-कता तथा उसे समृद्ध बनानेके उपायके ज्ञानसे वञ्चित रह जाते हैं और देशकी पतितावस्थाका कारण यही है। मातृभाषाका, वह चाहे कोई भी भाषा हो, पूर्ण ज्ञान हासिल करना विद्यार्थीका सर्वप्रथम कर्तव्य हो जाता है। मातृ-भाषाका ज्ञान न होनेसे अपनी संस्कृति, शिष्टाचार आदि का ज्ञान नहीं रहता और ऐसे व्यक्तिका आदर नहीं होता।

माता, पिता या अन्य अभिभावक जिस प्रकारकी शिक्षा उनके लिये उपयोगी समझते हैं उसीकी व्यवस्था

की जाती है। माता, पिता या अभिभावक तथा अध्यापक जीवन निर्माणमें सहायक होते हैं। अतः छात्रको इस बातका ध्यान सदैव रखना चाहिये कि वे उसके हितैषी हैं और उनमे विश्वास और उनका आदर कर ही वह उनकी व्यवस्थासे लाभ उठा सकता है। उनमे अविश्वास या अनादर होने पर उनकी व्यवस्थाके प्रति भी अविश्वास पैदा होता है, जिससे फिर उद्देश्यकी प्राप्तिमें बाधा आती है और छात्र-जीवनको असफल बनानेकी यह पहली सीढी है। मूर्खसे मूर्ख बुजुर्गको भी कुछ अनुभव होता है और छात्रको चाहिये कि वह अपनेको नितान्त अज्ञान मानकर शिक्षा ग्रहण करे।

शिक्षा ग्रहण करनेमे छात्रको अपनी सारी शक्ति लगा देनी चाहिये। जिस प्रकार एक कक्षाके बाद दूसरी कक्षामें प्रवेश होता है, ठीक उसी प्रकार समस्त मानव-जीवन होता है। मनुष्य क्रमशः उन्नति करता है और

एक-एक सीढ़ी चढ़कर वह मजिल तक पहुच सकता है। यह नहीं कि केवल अच्छे नम्बरसे पास हो जाना ही कर्त्तव्यकी पूर्ति है। छात्रको जिज्ञासु होना चाहिये, तभी वह सीख सकता है। विद्याध्ययनसे मस्तिष्कमे अधिक क्रियाशीलता आती है और यदि इस अवस्थामें उससे काम न लिया गया तो फिर आगे चलकर वह पूरी तरह से काम नहीं करेगा। अतएव ध्यानपूर्वक पढ़ना, सफल होना तथा उससे अपना ज्ञान बढ़ाना ही इस जीवनका कर्त्तव्य है।

विद्यार्थी जीवनमें जितना अधिक सीख सकोगे उतना ही आगे चलकर सहायता मिलेगी। अपनी पुस्तकोंसे प्रेम रखो और स्वाध्यायकी आदत डालनेकी कोशिश करो। छुट्टियोंमें बेकार कभी न बैठो। किसी शिक्षित और अनुभवीकी सलाहसे अच्छी-अच्छी किताबो का अध्ययन करते रहो। बेकार मन शैतानका कारखाना

बन जाता है। अतः मनको सदैव उच्च भावोंमे लगाये रहो और यह तभी हो सकता है जब सद्ग्रन्थोंका अध्ययन बराबर करते रहो। पुस्तकों द्वारा सभी प्रकारका ज्ञान पाया जा सकता है।

यदि स्वास्थ्य अच्छा रखना है, तो विद्वानसे पूछकर उस तरहकी किताबे पढो और शारीरिक उन्नति और बलपर सदैव ध्यान देते रहो। इस जीवनमे स्वास्थ्य कायम रखकर ही तुम शिक्षा ग्रहण कर सकते हो। इसलिये हल्के व्यायाम और खेल-कूदसे कभी न हिचको। ध्यानमें रहे कि तुम्हारे ऊपर भविष्यकी कितनी जिम्मेदारी आ पड़ेगी जिसके लिये मानसिक और शारीरिक शक्तिकी आवश्यकता पड़ेगी।

जो भी विषय तुम्हारे पढनेके लिये रखे गये हों उनपर सदैव ध्यान रहे और जहांतक हो सके, प्रमाणिक ज्ञान रखो, उसके तहमें पहुचनेकी कोशिश करो। केवल

अध्यापक या ट्यूटरकी मददसे काम न चलेगा। तुम्हें स्वय भी बातें समझनी होंगी और इस प्रकार अध्ययन-शील बनना होगा कि यदि मौका आ जाये तो बगैर किसीकी सहायताके अपनी शिक्षा जारी रख सको।

कथित कठिन विषयोंसे कभी जी न चुराओ और इस कहावतका विश्वास कभी न करो कि अमुक विषय तो कठिन है। कोई भी कार्य मनुष्यके लिये ससारमें कठिन नहीं है। यदि दृढ निश्चय कर शुद्ध दिमागसे किसी चीजके पढ़ने और समझनेकी चेष्टा करोगे तो सफलता अवश्यमेव मिलेगी। शिक्षार्थी जीवन ब्रह्मचर्याश्रम है और ब्रह्मचारीका जीवन सदैव आनन्दसे परिपूर्ण रहता है। सच्चा आनन्द वही है जिसका परिणाम आनन्ददायक हो। जिसका परिणाम दुःखद हो वह कदापि आनन्द नहीं और उससे दूर रहनेमें ही कुशल है।

चरित्र गठन

[४]

विभिन्न देशोंके विभिन्न पत्रोंमे कभी-कभी कुछ विचित्र बातें प्रकाशित की जाती हैं ताकि पाठकोंका मनोरञ्जन हो और ज्ञान भी बढ़ता जाये। उन विचित्रताओंमें कभी-कभी यह प्रसङ्ग भी आता है कि अमुक देशके अमुक व्यक्तिका ९९॥ वर्षमें देहान्त हो गया। ९९ वर्षकी आयुमें मरना ससारमें एक विचित्र घटना है। भारतमे लोग यह कहते हुए पाये जाते हैं कि आजकल तो ५०-६० वर्षके बाद जीवित रहना दुःख ही भोगना है। इस कथनमें कितना दर्द छिपा है। ५० वर्षकी आयुमें ही मृत्युकी आकाक्षा करनेवाले क्या कभी इस बातपर विचार करते हैं कि हमारे सासारिक जीवनके कर्तव्योंका जो विभाजन किया गया है उसमें यह आशा की गयी है कि प्रत्येक मनुष्य कमसे कम १०० वर्ष जिये।

ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यासकी अवधि २५ २५ वर्षकी रखी गयी थी, लेकिन अवधि सदैव कमसे कम समयकी रखी जाती है। इससे यह स्पष्ट है जिन पूर्वजोंने हमारे लिये इन नियमोंको बनाया था उन्हें यह ज्ञान था कि मनुष्यकी कमसे कम आयु १०० वर्ष की होगी। और आज २५ वर्षमें मनुष्य विभिन्न रोगोंका शिकार होकर अपना आगेका जीवन बिल्कुल दुःखद बना लेता है जबकि प्राचीन समयमें इस अवधि तक उसकी बाल्यावस्था मानी जाती थी और युवक नही होता था, जिसने अपने २५ वर्ष ब्रह्मचर्याश्रममें व्यतीतकर उन सब गुणोंको प्राप्त कर लिया हो जो कि गृहस्थाश्रममें प्रवेश करनेके लिये आवश्यक हैं।

फिर ऐसे महापुरुषोंके वंशज हम ५० वर्षकी आयुको भी अधिक मानें यह क्या हमारी शोचनीय अवस्थाका ज्वलन्त उदाहरण नही है? भारत और भारतीयोंको

इस बातका गर्व है कि बड़े-बड़े गौरवशाली देश, जो कि प्राचीन समयमें वैभवपूर्ण थे, आज मिट गये और उनका नामोनिशान भी नहीं है। उनका गौरव इतिहासकी पुस्तकोंमें ही पाया जाता है। लेकिन भारत—रामकृष्णका भारत—प्राचीन ऋषियोंका भारत आज भी अपनी प्राचीन संस्कृतिको अपने जर्जर शरीरमें लपेटे सर ऊंचा किये, समस्त संसारको बतला रहा है कि हम अमर हैं। हमारे धर्म और संस्कृतिपर किसीका सिक्का नहीं जम सकता। पाश्चात्य सभ्यता और उन्नतिके साधनके ठुकरानेकी आवाज सर्वप्रथम आज भारतसे ही आ रही है और वर्तमान अशान्ति इस बातका प्रमाण है कि आधुनिक सभ्यता मानव-समाजके लिये हितकर नहीं, वरन् उसका संहार करनेके लिये है। तरुण भारत तू किस नींदमें है! तू कौन-सा दुःस्वप्न देख रहा है? आंखें खोल और देख कि जिस सभ्यताको तू अपनानेके लिये

लालायित है वह तुझे अकर्मणय और पुरुषार्थहीन बना रही है और आज ५० वर्षकी आयुको ही अज्ञानवश तू पूर्णायु माने बैठा है।

इस पतन, इस दुःखद जीवन और अल्पायुका कारण यही है कि हम भारतमें रहकर भारतके जल-वायु और सस्कृतिके प्रतिकूल जा रहे हैं। हम प्रकृति विरोधी जीवन व्यतीत कर रहे हैं, फिर प्रकृति क्या हमें क्षमा करेगी और क्या हम दण्डके भागी नहीं होंगे? प्रकृतिकी रचना मानव जातिके कल्याणके लिये है और इसीलिये वह कभी अपना नियम भग नहीं करती और जो उसे भंग करनेकी चेष्टा करता है उसे वह दण्ड अवश्य देती है। यदि हम शान्ति और ध्यान पूर्वक विचार करें तो हम देखेंगे कि हमारी दुरवस्था और पतनका कारण प्रकृति जन्य नियमोंकी अवहेलना है और हम उसीके दण्ड स्वरूप इस अवस्थाको प्राप्त हो रहे हैं।

असख्य बुराइयां हमारेमें घुस गयी हैं जिनसे हमारी आयु घटती जाती है और हम यह शिकायत करते हैं कि आजकल ५० वर्षके बाद जीना दुःखद है। यदि यही अवस्था बनी रही तो ५० वर्ष क्या ५ वर्ष भी जीना कठिन हो जायेगा। विचार कीजिये कि किस प्रकार धीरे-धीरे देशमें अकाल मृत्यु बढ रही है।

वीर्यरक्षा द्वारा मनुष्य सर्वत्र विजयी होता है और उसके लिये यह आवश्यक है कि उसमें आत्म सयम हो। आत्मसयमका तभी सफल होगा जब सभी इन्द्रियोंपर पूरा अधिकार प्राप्त हो। तात्पर्य यह है कि यदि मनुष्य आहार,विहार तथा सभी अन्य कार्योंमे प्रकृति और धर्मके नियमोंका पालन करे तो कोई कारण नहीं कि वह १०० वर्ष तो साधारणतः जिये ही, साथ ही अपने आत्मबल तथा सद्कार्योंसे मनोवांछित फल पाये।

आजकल वृद्धजन इस बातकी विशेषरूपसे शिकायत

करते हैं कि छात्रोंमें—नवयुवकोंमें चरित्रबल नहीं रहता और वे विभिन्न प्रकारके व्यसनोंमें फस जाते हैं। एक तो योंही देशके भविष्यकी जिम्मेदारी तुम्हारे कधोंपर है, फिर यदि वर्तमान दुरवस्थाका कारण भी तुम्हीं बनो तो कितनी लज्जाकी बात है! वास्तवमें यदि छात्रोंमें चरित्र बल न रहा और वे दुर्व्यसनोंका शिकार बने रहे तो फिर उनका भला किसी प्रकार भी नहीं होगा

पान, सिगरेट, बीड़ी, तम्बाकू, गाजा, भाग, शराब, अफीम आदिके दुर्व्यसनोंसे दूर रहो। सोचो कि इनसे तुम्हारा कौन-सा लाभ है। किस प्रकारके लाभकी आशा करके दुर्व्यसनमें कोई फंसे। उनसे सर्वथा हानि ही है। विभिन्न प्रकारकी बीमारियोंसे देश योंही ग्रसित है। उसे बचानेके बजाय और भी गड्ढेमें ले जाना चाहोगे? क्या शिक्षा और सस्कृतिका यही ध्येय है?

शरीर या मनके लिये किसी प्रकारके नशेकी आवश्य-

कता नहीं पड़ती। छात्रोंका उनका शिकार होना केवल उनका उत्पादन ही है, वरना उसकी आवश्यकता क्या है। केवल फैशनके लिये अपनी जिन्दगी बर्वाद करना कहा की बुद्धिमानी है।

छात्र जीवनमें अल्पाहारी होना भी अत्यन्त आवश्यक है। अल्प और सात्विक आहार शरीर और मनको निर्मल वना सकता है। यह ध्यानमे रख लिया जाये कि हम जीनेके लिये खाते हैं खानेके लिये नहीं जीते। जो वस्तु शरीरको धारण करनेके लिये है उसे जीवनका उद्देश्य न मान वैठें। इसके अतिरिक्त यदि स्वादेन्द्रिय पर नियन्त्रण रहा हो निश्चय ही अन्य इन्द्रिया भी अपने वशमे रहेंगी। पंजाव प्रान्तमे छात्रोंका जीवन बड़ा ही कुत्सित वतलाया गया है उसका प्रधान कारण यही है कि उनका भोजन एकदम तामसिक है जिससे उनकी चित्तवृत्ति नियन्त्रणमें नहीं रहती और सयमका नामोनिशान नहीं रह जाता।

भविष्य चिन्तन

[५]

इस प्रकार मानव जीवनका उद्देश्यका ध्यानमें रख शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये और साथ ही चरित्र बल भी सग्रह करते जाओ जिससे सारी कठिनाइया हल की जा सकतीं हैं। याद रखो कि प्रत्येक बच्चा महापुरुष हो सकता है। महापुरुष बननेमे किसी भी बच्चेको, चाहे किसी भी अवस्थामें हो, कोई बाधा नहीं मिलेगी। अतः विद्यार्थी जीवनमें ही अपने भविष्य निर्माणकी फिक्र रखो। सोचो कि तुम जो शिक्षा ग्रहण कर रहे हो वह किस लिये है, उसका किस प्रकार उपयोग हो। वह तुम्हारे जीवनके अनुकूल होकर तुम्हारी उन्नतिमे सहायक हो और तुम अपना, अपने परिवारका, समाजका और विश्वका कल्याण कर सको।

विद्याध्ययनके साथ ही यह सोच लो कि देश और

समाजका तुम किस प्रकार कल्याण करने जा रहे हो और साथ ही अपने जीवनयापनके लिये कौन-सा मार्ग पसन्द है। देशके लिये काम आओगे तो क्रमशः समस्त विश्वका कल्याण भी कर सकोगे, यह निश्चित है। डाक्टर, वकील, व्यापारी, कलाकार, साहित्यकार, चित्र-कार जो भी बनना हो उसका चिन्तन करते रहो ताकि तुम्हारा मार्ग प्रशस्त और निश्चित रहे। कभी भी एक क्षणके लिये भी यह विचार उत्पन्न न हो कि असफलता मिलेगी। यदि भावनाए उच्च,सद्कार्यकी ओर दृष्टि रहीं, और चरित्र गठनके साथ विद्या ग्रहण करते गये तो फिर असफलता मिलनेका कोई कारण नहीं रह जाता।

देशकी परिस्थिति तुम्हारे सामने है। उसका अध्य-यन करो और-धीरे धीरे यह विचार करते रहो कि तुम किस प्रकार उसे सङ्कटोंसे बचाओगे, सामाजिक दुरवस्था कैसे दूर करोगे। याद रखो कि तुम्हारे प्रत्येक

दिनके आचरणसे समाजका निर्माण और अहित होता रहता है। जितनी ही उन्नति अपनी सभी क्षेत्रोंमे करोगे देशका और क्रमशः विश्वका उतना ही कल्याण करते जाओगे। उन्नतमना बनो, उच्च भाव रखो, महान् पुरुषोंके जीवनका अध्ययन करो, और जीवनका आदर्श बना लो।

भविष्य चिन्तनमें अपने माता, पिता, अभिभावक, अध्यापक तथा अन्य हितैषियोंकी सलाह भी लेनी चाहिये और भलीभांति उसपर स्वयं विचार और दृढ निश्चय करके अगला कदम रखना चाहिये। प्रत्येक कार्यका निर्णय उसके परिणामसें होता है। इसलिये कदम रखनेके पूर्व देख लेना चाहिये कि क्या बाधा है और उसका परिणाम क्या होगा। भविष्यको सन्देह और निराशाकी दृष्टिसे कभी न देखो। जिस प्रकारका भविष्य अपना सोचकर रखो उसके लिये क्रमशः बुनियाद भी

तैयार करते जाओ और उसको पोख्ता करनेका सामान भी सग्रह करते जाओ। 'अतिशय रगड़ करे जो कोई। अनल प्रकट चन्दनसे होई।' अभ्यवसाय और परिश्रम कभी असफल नहीं जायेगा और उसको उचित मात्रा और रीतिसे काममें लाया गया तो फिर परिणाम निश्चय ही हितकर होगा।

अपने जीवनके भविष्यके कार्यक्रमको निर्धारित करनेमें जल्दी करनेकी आवश्यकता नहीं। भलीभाति विचार कर लो, सलाह ले लो और अपनी क्षमतासे उसकी तुलना कर लो। यदि इस प्रकार कार्य करोगे तो फिर कोई आशका नहीं।

———

जीवनमें प्रवेश

[६].

गृहस्थाश्रम सर्वश्रेष्ठ है। वास्तवमें मनुष्य जीवनके कर्त्तव्योंकी पूर्ति तभी हो सकती है जब गृहस्थाश्रममे प्रवेशकर उसके नियमोंका पालन करते हुए जीवन व्यतीत किया जाये। अपना, परिवारका और समाजका कल्याण मनुष्य तभी कर सकता है जब वह अपना गार्हस्थ्य जीवन सफल बना सके और अन्य आश्रमोंकी सफलता इसी पर निर्भर करती है। गार्हस्थ्य जीवन जिसने सफलतापूर्वक व्यतीत कर लिया वही धन्य है; क्योंकि गृहस्थाश्रममें प्रवेश करते ही मनुष्य पर नाना प्रकारके दायित्व और कर्तव्य आते हैं और उन्हीकी पूर्ति ही अन्तमें जीवनकी सफलता है।

इस प्रकार, गृहस्थाश्रममें प्रवेश करनेके लिये सर्वप्रथम आवश्यकता यह है कि मनुष्य सामर्थ्यवान हो तथा

उसमें कर्त्तव्योंकी पूर्तिकी क्षमता हो। शरीर और मनसे जो शक्तिशाली हो वही तो इतना भार सम्भाल सकता सकता है। यह भलीभांति याद रखना चाहिये कि गृहस्थाश्रम कमजोर व्यक्तियोंके लिये नहीं है। जिसके शरीर और मनमें इतनी शक्ति न हो कि वह मनुष्य जीवनके कर्तव्योंकी पूर्ति करे वह गार्हस्थ्य जीवनसे दूर रहे। बलहीन गृहस्थ समाजको दूषित करता है और वह अपना और अपनी सन्तानका भविष्य सत्यानाश करेगा वह पहले ही निश्चित तो फिर गृहस्थाश्रममें प्रवेश कौन करे ? वह, जिसमें शारीरिक और मानसिक शक्ति परिपूर्ण हो, जो अपना और विश्वका कल्याण करनेकी क्षमता रखता हो, जो योग्य और पराक्रमी सन्तान उत्पन्न कर सके, जिसके पास यश, विद्या तथा बुद्धि हो। ऐसी अवस्थामें पहली बात यही सामने आनी है कि एक व्यक्ति जबतक कमसे कम २५ वर्षतक ब्रह्मचर्य धारण

कर अपनेमे उपर्युक्त गुणोंको एकत्रित नहीं कर लेता उसे गार्हस्थ्य जीवनमे प्रवेश करनेका कोई अधिकार नहीं। अतएव ब्रह्मचर्य गृहस्थाश्रमका मूल है।

निस्सन्देह अखण्ड ब्रह्मचारी और गृहस्थमें बहुत अन्तर है। लेकिन इन्द्रियोंको अपने वशमें रखते हुए तथा अपने कर्तव्योंकी पूर्ति करते हुए जो गृहस्थ जीवन व्यतीत करता है वह भी तेजस्वी, ओजस्वी, मनस्वी, यशस्वी, तपस्वी, लक्ष्मीवान तथा बुद्धिमान हो सकता है, और साथ ही विश्वका कल्याण करते हुए वह ऐसी सन्तान पैदा कर सकता है जो उसीकी भांति पराक्रमी हो। लेकिन यह योग्यता और शक्ति तभी प्राप्त हो सकती है जब इसके पूर्व ही ब्रह्मचर्याश्रमके नियमोंका पालन किया गया है।

सफल जीवन

[७]

भगवान कृष्णने गीतामें बतलाया है—

'कर्मण्येवाधिकारस्ते माफलेषु कदाचन।

कर्म करना अपने अधिकारमें है लेकिन फलकी आशा कदापि न करनी चाहिये। इसका मतलब यह कदापि नहीं है कि कर्म सफल नहीं होगा, इसका तात्पर्य यही है कि कर्म फलकी आशा करते हुए न करना चाहिये। फिर जीवनकी सफलता ? सद्कार्य करना ही उसका पुरस्कार है। मान लीजिये कि आपने एक पागलको, जो कि जाड़ेमें ठिठुर रहा है, कपड़ा दिया और उसने हसकर नालीमें फेंक दिया तो फिर क्या आपने उसपर दया नहीं की। आपने दया कर दी, आपका कर्तव्य पूरा हो गया, यद्यपि परिणाम-से आपको सन्तोष नहीं हुआ। मनुष्य जीवनमें कुछ कर्म ऐसे होते हैं जिनका करना ही उसका पुरस्कार है और

जिसमें सद्‌कार्य करनेकी बुद्धि और लगन है तथा उसे करता है उसे और चाहिये क्या ।

जीवनके सतपथपर आरूढ़ होकर फिर भय न करो कि परिणाम क्या होगा । फलकी आशा न छोड़ो, लेकिन कर्तव्यको उसपर आधारित न किया जाये । असफलता कर्ममें बाधा स्वरूप नहीं है ।

मानव जीवनका कर्तव्य पूरा होना ही जीवनकी सफलता है । वही सुख है । जिसने सदैव अपना, परिवारका, समाजका और क्रमशः समस्त मानव जातिके कल्याण करनेका सतत् उद्योग किया, कभी भी मार्गसे विचलित न हुआ और अपने सन्तानको भी अपनी ही भांति योग्य, देशसेवी, और पराक्रमी बना गया उसे फिर ससारमें और किस बातकी कमी रही ।

सत्य, अहिंसा, दया, निस्वार्थप्रेम, स्त्रियोंका सम्मान, बच्चोंसे प्रेमका व्रत लेकर मनसा-वाचा-कर्मणासे पूरा

किया वही सुखी मनुष्य है । वही आदरणीय और अनुकरणीय है ।

'पुरुष क्या पुरुषार्थ हुआ न जो ।' पुरुषार्थहीन जीवन मनुष्यता नहीं है । पुरुषार्थ ही मनुष्य जीवनकी कसौटी है । निर्वलों, अनाथों, अवलाओं और मनुष्येतर जातियो पर दया दिखलाना और अत्याचारियोंसे उनकी रक्षा करना ही पुरुषार्थ है ।

जीवनकी सफलता यह है कि एक व्यक्तिका जीवन उसकी सन्तानोंके लिये अनुकरणीय है । यदि जीवन आदर्श न रहा तो फिर उसे सफल नहीं कहा जायेगा । जो कुछ करो उसे ऐसा करो कि सभी याद करें और ससार त्याग देनेके वाद लोग प्रशसा करें ।

आजीवन विश्वका कल्याण करते रहो और इस ढग से करो कि तुम्हारे वाद भी विश्वका कल्याण होता रहे । यही अमरत्व है, यही देवतुल्य जीवन है । सांसारिक

जीवनकी यही सफलता है। देशकी तुम्ही आशा हो, तुम्हारे द्वारा उसका मुखोज्ज्वल होगा।

अपना देश, अपना धर्म, अपनी सस्कृति और अपने स्वत्वोंकी रक्षा करनेको सदैव तत्पर रहो। नम्र बनो लेकिन बलके साथ, निर्बलतासे दूर रहो। देशकी पराधीनता और भारतीयोंकी पतितावस्था कलक स्वरूप है, उसे दूर करना तुम्हारा कर्तव्य है। यही जीवनकी सफलता होगी।